राधे श्याम गुप्ता

बनाम

पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य

(2008 की सिविल अपील संख्या 6440-41)

4 नवंबर 2008

[अल्तमस कबीर और मार्कंडेय काटजू, जेजे.]

बैंकिंग/बैंक/सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908; प्रावधान (जी) से धारा 60(1):

ऋण की वसूली - वाहन खरीदने के लिए ऋण नहीं चुकाया गया - मुख्य देनदार और गारंटर के खिलाफ बैंक द्वारा मुकदमा दायर करना - ट्रायल कोर्ट द्वारा आदेश दिया गया कि बंधक वाहन की नीलामी बिक्री और ऋणी और गारंटर की अन्य संपत्तियों से शेष राशि की वसूली की जाए। - डिक्री का निष्पादन -निष्पादन न्यायालय ने पेंशन और ग्रेच्युटी के माध्यम से गारंटर द्वारा प्राप्त राशि के संबंध मे सावधि जमा रसीदों को कुर्क करने का निर्देश दिया क्योंकि वाहन का पता नहीं चल सका था- उच्च न्यायालय में ट्रायल कोर्ट को उचित आदेश पारित करने का निर्देश देने को चुनौती -निष्पादन न्यायालय का निर्देश सीपीसी की धारा 60(1) के प्रावधान (जी)

के मद्देनजर एफडीआर जारी करना- बैंक द्वारा पुनरीक्षण याचिका दायर करना -उच्च न्यायालय ने गारंटर को कुछ राशि जमा करने का निर्देश दिया, जिसे गारंटर की एफडीआर से समायोजित किया जा सकता था -उच्च न्यायालय द्वारा समीक्षा याचिका खारिज कर दी गई -की शुद्धता -अपील पर माना गया : उच्च न्यायालय ने गारंटर की पेंशन और ग्रेच्युटी के संबंध में बैंक द्वारा रखी गई सावधि जमा रसीदों से संतुष्ट करने के लिए डिक्रीटल राशि का निर्देश देकर पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के प्रयोग में ट्रायल कोर्ट के डिक्री को बदलने में गलती की। पेंशन और ग्रेच्युटी के माध्यम से प्राप्त राशि उनके चरित्र के अनुरूप नहीं थी और सीपीसी की धारा 60 (1) के प्रावधान (जी) द्वारा कवर की जाती रही। दोनों में से किसी एक के खिलाफ आगे बढ़ने का अधिकार ट्रायल कोर्ट के आदेश के अनुसार गारंटर या मुख्य देनदार प्रतिबंधित -उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित फैसले में डिक्रीटल राशि की वसूली के लिए - नीलामी बिक्री के लिए वाहन की वसूली के लिए बैंक द्वारा उठाए गए कदमों के बारे में कुछ भी दर्ज नहीं किया गया है - इसलिए, आक्षेपित आदेश को बरकरार नहीं रखा जा सकता है और निष्पादन न्यायालय के आदेश को रद्द नहीं किया जा सकता है। निष्पादन न्यायालय का आदेश बहाल किया - पेंशन और ग्रेच्युटी की एफडीआर की कुर्की के लिए आदेश जारी करने की शक्ति।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908- धारा 115 पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के प्रयोग में ट्रायल कोर्ट के डिक्री को बदलने में उच्च न्यायालय की शक्ति- चर्चा की गई।

प्रतिवादी नंबर 2 ने मोटर वाहन खरीदने के लिए प्रतिवादी नंबर 1, बैंक से 83,000/- रुपये का ऋण लिया। अपीलकर्ता ने ऋण लेने वाले के लिए गारंटी दी थी। चूंकि ऋणी ऋण नहीं चुका सका, इसलिए बैंक ने ऋणदाता और गारंटर के खिलाफ ऋण की वसूली के लिए मुकदमा दायर किया। मुकदमे में ट्रायल कोर्ट द्वारा 1,10,360/- रुपये की राशि ब्याज सहित तय की गई थी, जिसमें निर्देश दिया गया था कि बंधक वाहन की नीलामी बिक्री द्वारा उक्त राशि की वसूली की जाए और राशि, यदि कोई हो, जिसका भुगतान किया जाना बाकी हो। ऋणी और गारंटर की अन्य संपतियों से वसूल किया जाएगा। चूंकि वाहन का पता नहीं चल सका, इसलिए बैंक ने कथित तौर पर पेंशन और ग्रेच्युटी के माध्यम से प्राप्त राशि से गारंटर की सावधि जमा की कुर्की का आदेश मांगा। निष्पादन न्यायालय ने सावधि जमा रसीदें कुर्क करने का आदेश दिया। निष्पादन न्यायालय के आदेश से व्यथित होकर गारंटर ने उच्च न्यायालय का रुख किया। उच्च न्यायालय ने निष्पादन न्यायालय को उचित आदेश पारित करने का निर्देश दिया। निष्पादन न्यायालय ने एफडीआर जारी करने का निर्देश दिया क्योंकि एफडीआर में राशि सीपीसी की धारा 60 (1) के

प्रावधान (जी) के तहत संलग्न नहीं की जा सकती थी। इसने आगे निर्देश दिया कि वाहन को पहले नीलाम किया जाना था। व्यथित होकर बैंक ने पुनरीक्षण याचिका दायर की। उच्च न्यायालय ने गारंटर को तुरंत 50,000/- रुपये की राशि जमा करने और मुख्य देनदार की चल और अचल संपत्तियों का विवरण प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। गारंटर ने एक आवेदन दायर कर प्रार्थना की कि एफडीआर में से 50,000/- रुपये की राशि को समायोजित किया जाए और शेष राशि, यदि कोई हो, उसे वापस कर दी जाए। उच्च न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ पुनरीक्षण याचिका का निपटारा करते हुए निर्देश दिया कि गारंटर की सावधि जमा रसीदों में से 50,000/- रुपये की राशि को पहली बार में समायोजित किया जा सकता है। इसने यह भी निर्देश दिया कि निष्पादन न्यायालय के समक्ष सॉल्वेंट सुरक्षा के साथ वाहन प्रस्तुत किए जाने पर, सावधि जमा रसीद के तहत शेष राशि गारंटर को जारी की जाएगी। व्यथित होकर गारंटर ने एक समीक्षा याचिका दायर की, जिसे उच्च न्यायालय ने तुरंत खारिज कर दिया। इसलिए वर्तमान अपील करता है।

अपीलकर्ता ने अन्य बातों के साथ-साथ तर्क दिया कि ट्रायल कोर्ट का यह स्पष्ट इरादा था कि उक्त बकाया राशि की वसूली के लिए प्रतिवादियों की अन्य संपतियों को छूने से पहले बंधक वाहन की बिक्री आय का उपयोग डिक्री राशि की वसूली के लिए किया जाना चाहिए।

बैंक की ओर से यह प्रस्तुत किया गया कि वाहन का पता लगाने के कई प्रयास किए जाने के बावजूद उसका पता नहीं लगाया जा सका और इसलिए, बैंक के पास बकाया राशि वसूली के लिए गारंटर के रूप में अपीलकर्ता के खिलाफ कार्रवाई करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। सीपीसी की धारा 60 (1) के प्रावधान (जी) का प्रावधान केवल सेवानिवृति लाभ जैसे पेंशन और ग्रेच्युटी के माध्यम से प्राप्त राशि के स्रोत पर लागू होगा, लेकिन उसके संबंध में किए गए भुगतान पर नहीं; और यह कि एक बार संहिता की धारा 60 (1) के प्रावधानों के अंतर्गत आने वाली धनराशि संबंधित कर्मचारी को भुगतान कर दी गई, तो वे अब अपने मूल चरित्र को बरकरार नहीं रखते हैं और इसलिए, कुर्की के लिए उत्तरदायी हैं।

न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए अभिनिर्धारित किया:-

1.1. उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण याचिका में लगाए गए आदेश ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 की उपधारा (1) के प्रावधान को आकर्षित नहीं किया क्योंकि इसमें अंतिम रूप से यह तय करने की मांग की गई थी कि मुकदमे में डिक्री किस प्रकार पारित की गई थी। ट्रायल कोर्ट द्वारा प्रश्न में संतुष्ट होना था। हालाँकि इस न्यायालय का यह भी विचार है कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 60 (1) के प्रावधान (जी) के संबंध में उच्च न्यायालय ने यह निर्देश देकर एक न्यायिक त्रुटि की है कि बैंक द्वारा धारित डिक्रीटल राशि का एक हिस्सा

अपीलकर्ता की सावधि जमा रसीदों से संतुष्ट किया जाएगा और डिक्रीटल बकाया की वसूली के लिए नीलाम किए जाने के लिए प्रश्नगत वाहन को पेश करने की जिम्मेदारी अपीलकर्ता पर डालने में दूसरे शब्दों में उच्च न्यायालय ने अपने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार में ट्रायल कोर्ट के फैसले को बदलने में गलती की। खासकर जब अपीलकर्ता की पेंशन और ग्रेच्युटी, जिसे सावधि जमा में परिवर्तित कर दिया गया था, को सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के तहत संलग्न नहीं किया जा सकता। [पैरा 24] [224-जी-एच; 225-ए-बी]

कलकत्ता डॉक लेबर बोर्ड और अन्य बनाम श्रीमती संध्या मित्रा और अन्य, [1985] 2 एससीसी 1; यूनियन ऑफ इंडिया बनाम विंग कमांडर आर.आर. हिंगोरानी, (1987) 1 एससीसी 551; गोरखपुर विश्वविद्यालय और अन्य बनाम डॉ शीतला प्रसाद नागेंद्र और अन्य [2001] 6 एससीसी 591 और भारत संघ बनाम ज्योति चिट फंड और वित्त और अन्य, [1976] 3 एससीसी 607 पर भरोसा किया।

1.2. उच्च न्यायालय निष्पादन कार्यवाही में डिक्री के पीछे नहीं जा सकता था और डिक्री राशि की वसूली के तरीके में परिवर्तन गलत था और इसे बरकरार नहीं रखा जा सकता था। अपीलकर्ता को पेंशन और ग्रेच्युटी जैसे सेवानिवृत्ति लाभ प्राप्त होने के बाद भी, उन्होंने अपना चरित्र नहीं

खोया और संहिता की धारा 60 (1) के प्रावधान (जी) के तहत कवर होते रहे। [पैरा 25] [225-डी-ई]

1.3. उच्च न्यायालय ने गलती से इस आधार पर कार्यवाही की कि अपीलकर्ता द्वारा एक रियायत दी गई थी कि वह डिक्रीटल राशि को अपनी सावधि जमा से आंशिक रूप से समायोजित करने के लिए तैयार था, जो उसके सेवानिवृत्ति लाभों का प्रतिनिधित्व करता था और उसने स्वेच्छा से वाहन को बैंक के समक्ष पेश किया था ताकि उसे बेचकर बकाया राशि का बड़ा हिस्सा वसूल किया जा सके। इसके अलावा, हालांकि बैंक अपने बकाया की वसूली के लिए मूल ऋणी और गारंटर दोनों के खिलाफ आगे बढ़ने का हकदार था, वसूली का तरीका ट्रायल कोर्ट द्वारा निर्धारित किया गया था, जो स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि बैंक को जो भी राशि वसूल करनी है पहले वाहन की ब्रिकी से वसूल करनी चाहिए। मूल देनदार या गारंटर के खिलाफ आगे बढ़ने का बैंक का अधिकार ट्रायल कोर्ट के निर्देशों द्वारा प्रतिबंधित था। यह दर्ज करने के अलावा कि वाहन का पता नहीं लगाया जा सका, उच्च न्यायालय के आक्षेपित फैसले में कुछ भी दर्ज नहीं किया गया है कि बिक्री के लिए वाहन की वसूली के लिए बैंक द्वारा अपने डिक्रिटल बकाया की वसूली के लिए वास्तव में क्या कदम उठाए गए थे। [पैरा 26] [255-जी-एच; 256-ए-सी]

भारत संघ बनाम ज्योति चिट फंड और वित्त और अन्य [1976] 3 एससीसी 607, संदर्भित।

1.4. सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अनुरूप पारित निष्पादन न्यायालय के आदेश को परिवर्तित करने के बजाय, निष्पादन न्यायालय के निष्कर्ष पर विशेष ध्यान देते हुए कि उक्त सावधि जमा अपीलकर्ता के सेवानिवृत्ति लाभों का प्रतिनिधित्व करती है उच्च न्यायालय को प्रतिवादी बैंक और निष्पादन न्यायालय को वाहन की वसूली या मूल देनदार की किसी अन्य संपत्ति के खिलाफ गंभीरता से कार्यवाही करने का निर्देश देना चाहिए था। इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को रद्द किया जाता है और निष्पादन न्यायालय के आदेश को बहाल किया जाता है। [पैरा 26 और 27] [256-सी-ई]

केस कानून संदर्भ:

[1985] 2 एससीसी 1	पर भरोसा	पैरा 15
[1987] 1 एससीसी 551	पर भरोसा	पैरा 16
[2001] 6 एससीसी 591	पर भरोसा	पैरा 16
[1976] 3 एससीसी 607	पर भरोसा	पैरा 17
[1976] 3 SCC 607	संदर्भित	पैरा 17

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील संख्या 6440-6441/ 2008।

जयपुर में राजस्थान उच्च न्यायालय के अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 28.02.2005 और 24.08.2005 के नं. क्रमशः एसबीसीआरपी का 2005 का 26 और 2003 का 2008।

अपीलकर्ता की ओर से शोभा, हरीश शर्मा और आरपी यादव।

प्रतिवादियों की ओर से ध्रुव मेहता, हर्षवर्धन झा, यशराह सिंह देवड़ा और टीएस सबरीश (मैसर्स केएल मेहता एंड कंपनी के लिए)

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति अल्तमस कबीर, जे. द्वारा पारित किया गया था।

1. अनुमति दी गई।

2. 28 मई, 1986 को प्रतिवादी नंबर 1 बैंक ने यहां प्रतिवादी नंबर 2 श्री दुर्गा प्रसाद को 83,000/- रुपये का ऋण स्वीकृत किया। अपीलकर्ता ने ऋण के पुनर्भुगतान के लिए मूल देनदार के लिए गारंटी दी थी।

3. चूँकि मुख्य देनदार, दुर्गा प्रसाद द्वारा ऋण नहीं चुकाया गया था, बैंक ने 1992 में प्रतिवादी संख्या 2 के विरुद्ध ऋणदाता की हैसियत से और अपीलकर्ता के विरुद्ध अपनी बकाया राशि की वसूली के लिए 1992 का

मुकदमा संख्या 66 दायर किया गारंटर वाद का फैसला 19 दिसंबर, 1994 को विद्वान अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश, बयाना, जिला- भरतपुर द्वारा प्रतिवादी नंबर 1 बैंक के पक्ष में 1,10,360/- रुपये की राशि ब्याज सहित सुनाया गया। मुकदमा शुरू होने की तारीख से वसूली तक 12.5% प्रति वर्ष की दर मुकदमे का निर्णय करते समय ट्रायल कोर्ट ने निम्नानुसार निर्देश दिया:

> "वादी, बंधक मेटाडोर महिंद्रा एफसी आरआरडी/1851 की नीलामी बिक्री द्वारा इस राशि को वसूलने का हकदार होगा। वादी मुकदमे की लागत के लिए भी हकदार होगा। यदि मेटाडोर की नीलामी बिक्री के बाद भी कोई राशि भुगतान की जानी बाकी है, तो इसे प्रतिवादियों की अन्य संपत्तियों से वसूल किया जाएगा। वादी के मुकदमे को उपरोक्त शर्तों में प्रतिवादियों के खिलाफ डिक्री किया जाता है।"

4. उपरोक्त निर्देशों ने डिक्री के निष्पादन में कुछ भ्रम पैदा कर दिया है।

5. डिक्री को क्रियान्वित करने के उद्देश्य से प्रतिवादी नंबर 1 बैंक ने निष्पादन कार्यवाही शुरू की और हालांकि मेटाडोर की कुर्की के लिए वारंट जारी किए गए थे, लेकिन बैंक द्वारा इसे इस आधार पर निष्पादित नहीं किया गया कि वाहन का पता नहीं लगाया जा सका और इसके बजाय बैंक

ने मांग की पेंशन और ग्रेच्युटी के माध्यम से प्राप्त राशि के साथ उक्त बैंक में अपीलकर्ता की सावधि जमा की कुर्की। निष्पादन न्यायालय ने बैंक के आवेदन को स्वीकार कर लिया और अपीलकर्ता की सावधि जमा रसीदें, जिन्हें इसके बाद "एफडीआरएस" कहा जाएगा, संलग्न करने का आदेश दिया। अपीलकर्ता ने कुर्की के आदेश के खिलाफ उच्च न्यायालय का रुख किया और उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता के आवेदन को स्वीकार करते हुए ट्रायल कोर्ट को निर्देश दिया कि वह डिक्रीटल राशि की वसूली के लिए 19 दिसंबर, 1994 के फैसले और डिक्री में दिए गए विशिष्ट निर्देशों के आलोक में उचित आदेश पारित करे। निष्पादन न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 1 नवंबर, 2002 द्वारा अपीलकर्ता की एफडीआर और पेंशन राशि जारी करने का निर्देश दिया, साथ ही निर्देश दिया कि 19 दिसंबर, 1994 के फैसले के पैराग्राफ 11 में निहित निर्देशों के अनुसार सबसे पहले बंधक मेटाडोर की नीलामी की जानी थी। निष्पादन न्यायालय ने यह भी विचार किया कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 60 (1) के प्रावधान (जी) के प्रावधानों के मद्देनजर ग्रेच्युटी और पेंशन के लिए भुगतान की गई राशि को संलग्न नहीं किया जा सकता है, जिसे इसके बाद "संहिता" के रूप में संदर्भित किया जाएगा।

6. बैंक ने निष्पादन न्यायालय के 1 नवंबर, 2002 के उक्त आदेश के खिलाफ एक पुनरीक्षण याचिका दायर की और उसमें अंतरिम आदेश के

लिए भी आवेदन किया। 15 अक्टूबर, 2003 को जब मामला उच्च न्यायालय के समक्ष आया, तो अपीलकर्ता को तुरंत बैंक में 50,000/- रुपये की राशि जमा करने का निर्देश दिया गया। उन्हें मुख्य देनदार की चल और अचल संपत्तियों का पूरा विवरण इस शर्त के साथ प्रस्तुत करने का भी निर्देश दिया गया था कि यदि बैंक की पुनरीक्षण याचिका विफल हो जाती है, तो अपीलकर्ता द्वारा जमा की गई राशि उसे 9% प्रतिवर्ष की दर से ब्याज के साथ वापस कर दी जाएगी। उक्त निर्देश का पालन करने के बजाय, अपीलकर्ता ने एक आवेदन दायर किया जिसमें बताया गया कि उसकी कुल 50,000/- रुपये से अधिक मूल्य की दो सावधि जमा रसीद बैंक के पास पड़ी थी और 50,000/- रुपये की नकद जमा के बजाय उक्त दो सावधि जमा रसीदों को जमा की जाने वाली उक्त राशि के विरुद्ध समायोजित किया जा सकता है और शेष, यदि कोई हो, अपीलकर्ता को वापस किया जा सकता है।

7. बैंक की पुनरीक्षण याचिका का निपटारा करते समय, उच्च न्यायालय ने अपने फैसले में कहा कि अपीलकर्ता ने वचन दिया था कि वह एक सप्ताह की अवधि के भीतर नीलामी के उद्देश्य से बैंक को मेटाडोर प्रस्तुत करेगा और बैंक डिक्री की शर्तों के अनुसार उसकी नीलामी करने के लिए स्वतंत्र होंगे। यह भी नोट किया गया कि अपीलकर्ता शेष डिक्रीटल राशि की वसूली के लिए सॉल्वेंट सिक्योरिटी जमा करने के लिए तैयार था,

जो कि 50,000/- और मैटाडोर की बिक्री से प्राप्त बिक्री मूल्य के समायोजन के बाद भी देय रह सकती है।

8. उपरोक्त के आलोक में, निष्पादन न्यायालय के आदेश को रद्द कर दिया गया और डिक्री के संदर्भ में और 15 अक्टूबर, 2003 को उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसार, अपीलकर्ता की सावधि जमा रसीदों में से रु. 50,000/- की राशि को पहली बार में समायोजित करने का निर्देश दिया गया था। यह भी निर्देशित किया गया था कि अपीलकर्ता द्वारा विद्वान निष्पादन न्यायालय के समक्ष विलायक सुरक्षा के साथ मेटाडोर प्रस्तुत किए जाने पर, सावधि जमा रसीद के तहत शेष राशि उसे जारी कर दी जाएगी। आगे यह निर्देश दिया गया कि मेटाडोर प्रस्तुत किए जाने पर, डिक्री धारक बैंक मेटाडोर की बिक्री से डिक्रीटल राशि को वसूल करने का हकदार होगा और डिक्रीटल राशि के शेष, यदि कोई हो, को उसके द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली सॉल्वेंट सिक्योरिटी के माध्यम से वसूल करेगा। यहां अपीलकर्ता को, सावधि जमा रसीदें, जिन्हें अपीलकर्ता के सेवानिवृत्ति लाभ के रूप में स्वीकार किया गया था, उसे वापस कर दी जानी थी।

9. 5 अप्रैल, 2005 को, अपीलकर्ता ने 28 फरवरी, 2005 के आदेश के संबंध में उच्च न्यायालय के समक्ष एक समीक्षा याचिका दायर की, इस आधार पर कि पुनरीक्षण न्यायालय ने इस आधार पर गलत तरीके से कार्यवाही की थी कि अपीलकर्ता ने एक वचन दिया था बैंक को मेटाडोर

प्रस्तुत करें और यदि मेटाडोर की बिक्री के बाद बैंक द्वारा कोई राशि वसूल की जानी शेष है, तो वह डिक्रीटल राशि की वसूली के लिए एक सॉल्वेंट सिक्योरिटी भी जमा करेगा। अपीलकर्ता द्वारा दायर समीक्षा याचिका को 24 अगस्त, 2005 को उच्च न्यायालय ने यह कहते हुए खारिज कर दिया कि 28 फरवरी, 2005 के आदेश की समीक्षा के लिए समीक्षा याचिका में कोई मामला नहीं बनाया गया था।

10. विशेष अनुमति याचिका उच्च न्यायालय के दिनांक 28 फरवरी, 2005 और 24 अगस्त, 2005 के उक्त आदेशों के विरुद्ध निर्देशित है।

11. सुश्री शोभा, विद्वान अधिवक्ता, जो अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित हुई, ने मुख्य रूप से तीन आधारों पर उच्च न्यायालय के फैसले और आदेश पर सवाल उठाया। चुनौती के लिए उनका पहला आधार यह था कि ट्रायल कोर्ट की डिक्री में दिशा बिल्कुल स्पष्ट थी और ऐसी कोई अस्पष्टता नहीं थी जिसके लिए उच्च न्यायालय को किसी भी स्पष्टीकरण की आवश्यकता हो। उन्होंने प्रस्तुत किया कि ट्रायल कोर्ट के निर्देश में डिक्री धारक बैंक को बंधक वाहन की नीलामी बिक्री द्वारा डिक्रीटल राशि के साथ-साथ मुकदमेबाजी की लागत की वसूली करने का अधिकार है और यदि मैटाडोर की नीलामी बिक्री के बाद भी कोई राशि भुगतान की जानी बाकी है, तो उसे प्रतिवादियों की अन्य संपत्तियों से वसूल किया जा सकता है। सुश्री शोभा के अनुसार, इस तरह के निर्देश से जो स्पष्ट अर्थ निकलता

है, वह है पहले मेटाडोर की बिक्री और उसके बाद डिक्री के तहत वसूली जाने वाली राशि के साथ बिक्री मूल्य का समायोजन तत्पश्चात कोई भी राशि जो अभी भी भुगतान नहीं की गई है, दूसरे चरण में, प्रतिवादी की अन्य संपत्तियों से वसूल की जा सकती है। सुश्री शोभा ने प्रस्तुत किया कि यह स्पष्ट रूप से ट्रायल कोर्ट का इरादा था कि उक्त बकाया राशि की वसूली के लिए प्रतिवादियों की अन्य संपत्तियों को छूने से पहले बंधक वाहन की बिक्री आय का उपयोग डिक्रीटल राशि की वसूली के लिए किया जाना चाहिए।

12. इस संबंध में सुश्री शोभा ने औद्योगिक ऋण और विकास सिंडिकेट बनाम स्मिथाबेन एच पटेल और अन्य, [1999] 3 SCC 80 के मामले में इस न्यायालय के फैसले का उल्लेख किया और उस पर भरोसा किया, जिसमें ऐसी स्थिति का सामना करना पड़ा था। ट्रायल कोर्ट ने किश्तें तय करने के अलावा, डिक्रीटल राशि के भुगतान के लिए कोई तरीका निर्धारित नहीं किया था, अन्य बातों के साथ-साथ यह माना गया था कि डिक्रीटल राशि के लिए भुगतान के विनियोग का सामान्य नियम यह था कि ऐसी राशि को पहले समायोजित किया जाना चाहिए, सीधे डिक्री में निहित निर्देश के अनुसार और इस तरह के निर्देश के अभाव में, समायोजन पहले ब्याज और लागत के भुगतान में और उसके बाद मूल राशि के भुगतान में किया जाना चाहिए, इस अपवाद के अधीन कि पार्टियां

सहमत हो सकती हैं। डिक्री के बावजूद किसी अन्य तरीके से भुगतान का समायोजन।

13. सुश्री शोभा द्वारा आग्रह किया गया दूसरा आधार यह था कि हालाँकि शुरू में अपीलकर्ता की सावधि जमा रसीदें निष्पादन न्यायालय द्वारा संलग्न की गई थीं, अंततः अपीलकर्ता की ओर से आपत्तियाँ दायर करने पर, निष्पादन न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 01.11.2002 द्वारा यह निष्कर्ष निकला कि अपीलकर्ता की सावधि जमा रसीदें सिविल प्रक्रिया संहिता (इसके बाद 'संहिता' के रूप में संदर्भित) की धारा 60 की उप-धारा (1) के प्रावधान (जी) के मद्देनजर संलग्न नहीं की जा सकतीं। सुश्री शोभा ने प्रस्तुत किया कि निष्पादन न्यायालय के उक्त आदेश के खिलाफ बैंक द्वारा दायर पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय द्वारा यह गलती से दर्ज किया गया था कि अपीलकर्ता ने बैंक के समक्ष मेटाडोर पेश करने का वचन दिया था ताकि उसे वसूली के लिए बेचा जा सके। बैंक का बकाया और शेष बकाया, यदि कोई हो, अपीलकर्ता द्वारा प्रदान की जाने वाली सॉल्वेंट सिक्योरिटी से वसूल किया जा सकता है। यह प्रस्तुत किया गया कि चूंकि उच्च न्यायालय को ऐसा कोई वचन नहीं दिया गया था, इसलिए अपीलकर्ता की ओर से एक समीक्षा याचिका दायर की गई थी जिसे तुरंत खारिज कर दिया गया था। सुश्री शोभा ने यह भी कहा कि मैटाडोर का पता लगाने का कोई प्रयास किए बिना, ताकि डिक्री की संतुष्टि के लिए

ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए निर्देशों को ध्यान में रखते हुए इसे बेचा जा सके, डिक्री धारक ने केवल अपीलकर्ता के खिलाफ कार्रवाई की क्योंकि उसके पास सेवा से सेवानिवृत्ति के समय अपीलकर्ता द्वारा प्राप्त ग्रेच्युटी सहित सेवानिवृत्ति लाभों से की गई सावधि जमा के संबंध में अपीलकर्ता की सावधि जमा रसीदें थीं। सुश्री शोभा ने अपना निवेदन दोहराया कि, जैसा कि निष्पादन न्यायालय द्वारा सही माना गया था, अपीलकर्ता की सावधि जमा जो उसके सेवानिवृत्ति लाभों का प्रतिनिधित्व करती थी, डिक्री धारक बैंक द्वारा प्राप्त डिक्री को संतुष्ट करने के लिए संलग्न या बेची नहीं जा सकती थी। उन्होंने आग्रह किया कि अपीलकर्ता द्वारा प्राप्त सेवानिवृत लाभों को सावधि जमा में परिवर्तित करने के बाद भी इसने अपीलकर्ता के सेवानिवृत्ति लाभों को शामिल करने के अपने आवश्यक चरित्र को नहीं खोया है और इसलिए, संहिता की धारा 60 (1) के प्रावधान (जी) के मद्देनजर इसे संलग्न नहीं किया जा सकता है।

14. हालाँकि, इस बिंदु पर विधि सुस्थापित है, सुश्री शोभा ने अपनी दलील के समर्थन में विभिन्न निर्णयों का हवाला दिया था कि निष्पादन न्यायालय डिक्री के पीछे नहीं जा सकता या उसके प्रावधानों को बदल नहीं सकता है। इस संबंध में उनके द्वारा उद्धृत पहला निर्णय राजस्थान वित्तीय निगम बनाम मैन इंडस्ट्रियल कॉर्पोरेशन लिमिटेड, [2003] 7 एससीसी 522 में इस न्यायालय का निर्णय है, जिसमें संहिता की धारा 47 और

आदेश 21 के प्रावधानों की व्याख्या करते हुए, इस न्यायालय ने यह माना गया कि एक निष्पादन न्यायालय डिक्री से आगे नहीं जा सकता है और निष्पादन न्यायालय को उसके कार्यकाल के अनुसार डिक्री लेनी होगी। सुश्री शोभा ने भारतीय स्टेट बैंक बनाम मैसर्स इंडेक्सपोर्ट रजिस्टर्ड और अन्य, [1992] 3 एससीसी 159, मामले में इस न्यायालय के फैसले का भी उल्लेख किया, जिसमें पहले भी इसी सिद्धांत पर विचार किया गया था।

15. सुश्री शोभा की दलील को इस न्यायालय के फैसले कलकत्ता डॉक लेबर बोर्ड और अन्य बनाम श्रीमती संध्या मित्रा और अन्य [1985] 2 एससीसी 1 मामले में समर्थन मिलता है, जिसमें यह पुष्टि की गई थी कि ग्रेच्युटी भुगतान अधिनियम, 1972 की धारा 5 के तहत अधिसूचना के अभाव में एक योजना के तहत डॉक श्रमिकों को देय ग्रेच्युटी, न्यायालय के डिक्री की संतुष्टि के लिए कुर्की के लिए उत्तरदायी नहीं होगी।

16. इसी सिद्धांत को इस न्यायालय ने भारत संघ बनाम विंग कमांडर आरआर हिंगोरानी, [1987] 1 एससीसी 551 और गोरखपुर विश्वविद्यालय और अन्य बनाम डॉ शीतला प्रसाद नागेंदर और अन्य [2001] 6 एससीसी 591 में दोहराया था।

17. हालाँकि, पूरी निष्पक्षता से, सुश्री शोभा ने इस न्यायालय के फैसले भारत संघ बनाम ज्योति चिट फंड और वित्त और अन्य [1976] 3 SSC 607 का भी हवाला दिया, जहां भविष्य निधि अधिनियम, 1925 की

धारा 3 और 4 के प्रावधानों से निपटते समय, सरकार द्वारा धारित राशि की कुर्की पर रोक लगाई गई, साथ ही संहिता की धारा 60 (1) के प्रावधान (जी), इस न्यायालय ने माना कि जब तक भविष्य निधि के माध्यम से देय राशि नहीं होगी, अनिवार्य जमा और पेंशन लाभ कर्मचारी के हाथों तक नहीं पहुंचे, उन्होंने अपना चरित्र वैसे ही बरकरार रखा और इसलिए, उन्हें कुर्क नहीं किया जा सका। हालांकि, एक बार कर्मचारी को राशि प्राप्त हो जाने के बाद वे अपने मूल चरित्र को बनाए रखना बंद कर देते हैं और इसलिए, कुर्क किए जाने में सक्षम होते हैं। सुश्री शोभा ने आग्रह किया कि उपरोक्त निर्णय उनके द्वारा उद्धृत अन्य निर्णयों से बहुत पहले दिया गया था और बाद के निर्णय पहले के निर्णय पर लागू होंगे।

18. अपने उपरोक्त दो आधारों के अलावा, सुश्री शोभा ने अंततः प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय के समक्ष बैंक द्वारा दायर की गई पुनरीक्षण याचिका, संशोधित संहिता की धारा 115 के प्रावधानों के मद्देनजर अपने आप में सुनवाई योग्य नहीं थी, जो इसे बनाती है स्पष्ट है कि यदि पुनरीक्षण के लिए आवेदन करने वाले पक्ष के पक्ष में कोई आदेश मामले का अंतिम निर्णय करता है तो केवल पुनरीक्षण ही कायम रखा जा सकता है, लेकिन यदि इससे मुकदमे या अन्य कार्यवाही पर अंतिम निर्णय नहीं होता है, तो ऐसा पुनरीक्षण कायम करने योग्य नहीं होगा। सुश्री शोभा ने आग्रह किया कि इस मामले में बैंक ने एक अंतवर्ती आदेश के खिलाफ एक

पुनरीक्षण दायर किया था, जिसका निष्पादन कार्यवाही के अंतिम निपटान पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा और परिणामस्वरूप बैंक की ओर से दायर पुनरीक्षण को उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया जाना चाहिए था । इस संबंध में सुश्री शोभा ने इस न्यायालय के फैसले शिव शक्ति कूप हाउसिंग सोसाइटी, नागपुर बनाम स्वराज डेवलपर्स और अन्य, [2003] 6 एससीसी 659 और सूर्य देव राय बनाम राम चंदर राय और अन्य, [2003] 6 एससीसी 675 जो उसी खण्ड में पृष्ठ 675 पर रिपोर्ट का हवाला दिया गया।

19. सुश्री शोभा ने आग्रह किया कि उच्च न्यायालय ने निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश में हस्तक्षेप करके गलती की है और इन कार्यवाहियों में लगाए गए उसके निर्णय और आदेश को रद्द किया जाना चाहिए।

20. बैंक की ओर से, श्री ध्रुव मेहता ने प्रस्तुत किया कि मेटाडोर का पता लगाने के कई प्रयास किए जाने के बावजूद, उसका पता नहीं लगाया जा सका और इसलिए, बैंक के पास अपने बकाया की वसूली के लिए गारंटर के रूप में अपीलकर्ता के खिलाफ आगे बढ़ने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। श्री मेहता ने आग्रह किया कि संहिता की धारा 60 (1) के प्रावधान (जी) का प्रावधान केवल सेवानिवृत्ति लाभ, जैसे पेंशन और ग्रेच्युटी के माध्यम से प्राप्त राशि के स्रोत पर लागू होगा, लेकिन उसके

संबंध में किए गए भुगतान पर नहीं। दूसरी ओर, एक बार इस तरह के भुगतान किए जाने के बाद, उनका चरित्र बदल जाता है क्योंकि वे संबंधित कर्मचारी की अन्य संपत्तियों के साथ मिश्रित हो जाते हैं। अपनी दलील के समर्थन में, श्री मेहता ने विंग कमांडर आर.आर. हिंगोरानी (सुप्रा) के मामले पर भी भरोसा किया, जिसका उल्लेख सुश्री शोभा ने किया था, जिसमें पेंशन अधिनियम, 1871 की धारा 11 के अनुसार पेंशन को कुर्की से छूट का प्रावधान था। इस न्यायालय ने ज्योति चिट फंड मामले (सुप्रा) में फैसले का हवाला दिया, जहां कृष्णा अय्यर, जे, ने बेंच के लिए बोलते हुए संकेत दिया था कि एक बार संहिता की धारा 60(1) के परंतुक के प्रावधानों द्वारा कवर किया गया धन संबंधित कर्मचारी को भुगतान किया गया था, वे अब अपने मूल चरित्र को बरकरार नहीं रखते हैं और इसलिए, कुर्की के लिए उत्तरदायी है।

21. विचारण कोर्ट के निर्देशों के निर्माण पर, जिन्हें बाद में उच्च न्यायालय द्वारा बदल दिया गया था, श्री मेहता ने आग्रह किया कि जब बंधक वाहन का पता नहीं लगाया जा सका, तो बैंक को उपचार के बिना नहीं छोड़ा जा सकता है और यह इरादा नहीं हो सकता है ट्रायल कोर्ट ने कहा कि अगर वाहन को पकड़ा नहीं जा सका तो भी बैंक का आदेश असंतुष्ट रहेगा। यदि डिक्री की भाषा को व्यावहारिक अर्थ देना है, तो इसका अर्थ यह निकालना होगा कि पहले मेटाडोर की बिक्री से डिक्रीटल बकाया

की वसूली का प्रयास किया जाना चाहिए, और उसके बाद अपीलकर्ता द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली साल्वेंट सिक्योरिटी से शेष बकाया राशि, यदि कोई हो, की वसूली का प्रयास किया जाना चाहिए। डिक्री यह इंगित नहीं करती है कि यदि मैटाडोर को बेचा नहीं जा सका, तो डिक्री को जजमेंट देनदार या गारंटर की अन्य संपत्तियों के खिलाफ बिल्कुल भी निष्पादित नहीं किया जा सकता है।

22. श्री मेहता ने आग्रह किया कि हिंगोरानी के मामले (सुप्रा) में उच्च न्यायालय इस सवाल पर विचार कर रहा था कि क्या निष्पादन न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए डिक्री के पीछे जा सकता है कि यह संहिता की धारा 60 (1) के परंतुक (जी) के कारण अपीलकर्ता के खिलाफ निष्पादन योग्य नहीं था और उस संदर्भ में पुनरीक्षण याचिका में उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश उचित थे।

23. श्री मेहता ने अंततः तर्क दिया कि 1 नवंबर, 2002 को विद्वान निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित आदेश, प्रतिवादी बैंक द्वारा पुनरीक्षण में लगाया गया, अंतिम प्रकृति का था और इसलिए संहिता की धारा 115 (1) के प्रावधानों के तहत रोक को आकर्षित नहीं करता है।

24. संबंधित पक्षों की ओर से की गई दलीलों पर विचार करने के बाद, हम श्री मेहता की इस दलील को स्वीकार करने के इच्छुक हैं कि उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण याचिका में लगाए गए आदेश संहिता

की धारा 115 की उप-धारा (1) के प्रावधान की रोक को आकर्षित नहीं करते हैं। चूंकि इसने अंतिम रूप से यह तय करने की मांग की थी कि 1992 के वाद संख्या 66 में विद्वान अतिरिक्त और सत्र न्यायाधीश, बसाना, राजस्थान द्वारा पारित डिक्री को किस तरह से संतुष्ट किया जाना था। हालाँकि, हमारा यह भी विचार है कि संहिता की धारा 60(1) के प्रावधान (जी) के संबंध में, उच्च न्यायालय ने यह निर्देश देकर क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि की कि डिक्रीटल राशि का एक हिस्सा अपीलकर्ता की बैंक द्वारा रखी गई सावधि जमा रसीदों से संतुष्ट किया जाए। उच्च न्यायालय ने डिक्रीटल बकाया की वसूली के लिए नीलामी हेतु विचाराधीन मेटाडोर को पेश करने की जिम्मेदारी अपीलकर्ता पर डालकर भी गलती की। दूसरे शब्दों में, उच्च न्यायालय ने अपने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार में ट्रायल कोर्ट के फैसले को बदलने में गलती की, खासकर जब अपीलकर्ता की पेंशन और ग्रेच्युटी, जिसे सावधि जमा में परिवर्तित कर दिया गया था, को सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के तहत कुर्क नहीं किया जा सकता। ज्योति चिटफंड मामले (सुप्रा) में निर्णय को बाद के निर्णयों द्वारा काफी कमजोर कर दिया गया है, जिन्हें यहां पहले पैराग्राफ 15 और 16 में दर्शाया गया है और यह माना गया है कि संहिता की धारा 60(1) के प्रावधान (जी) के मद्देनज़र न्यायालय की डिक्री की संतुष्टि के लिए देय ग्रेच्युटी कुर्की के लिए उत्तरदायी नहीं होगी।

25. हम सुश्री शोभा से भी सहमत हैं कि उच्च न्यायालय निष्पादन कार्यवाही में डिक्री के पीछे नहीं जा सकता था और डिक्री राशि की वसूली के तरीके में परिवर्तन गलत था और इसे बरकरार नहीं रखा जा सकता है। हम सुश्री शोभा से भी सहमत हैं कि अपीलकर्ता को पेंशन और ग्रेच्युटी जैसे सेवानिवृत्ति लाभ प्राप्त होने के बाद भी, उन्होंने अपना चरित्र नहीं खोया और संहिता की धारा 60(1) के प्रावधान (जी) के तहत कवर होते रहे। ज्योति चिट फंड और फाइनेंस मामले (सुप्रा) में निर्णय को छोड़कर, जहां एक विपरीत दृष्टिकोण अपनाया गया था, उसके बाद लिया गया लगातार दृष्टिकोण इस तर्क समर्थन करता है कि केवल इस तथ्य के कारण कि अपीलकर्ता को ग्रेच्युटी और पेंशन लाभ नकद में प्राप्त हुए थे, इसे अब अपीलकर्ता को भुगतान किए गए ऐसे सेवानिवृत्ति लाभों के रूप में पहचाना नहीं जा सकता है।

26. उच्च न्यायालय, हमारे विचार में, गलती से इस आधार पर आगे बढ़ गया कि अपीलकर्ता द्वारा एक रियायत दी गई थी कि वह अपनी सावधि जमा से आंशिक रूप से समायोजित राशि को समायोजित करने के लिए तैयार था, जो उसके सेवानिवृत्ति लाभों का प्रतिनिधित्व करता था और उसने भी किया था। स्वेच्छा से वाहन को बैंक के समक्ष प्रस्तुत किया ताकि उसे बेचकर बकाया राशि का बड़ा हिस्सा वसूल किया जा सके। इसके अलावा, हालांकि बैंक अपने बकाया की वसूली के लिए मूल ऋणी और

गारंटर दोनों के खिलाफ कार्रवाई करने का हकदार था, वसूली का तरीका ट्रायल कोर्ट द्वारा निर्धारित किया गया था, जो हमारे विचार में, स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि बैंक को ऐसा करना चाहिए कि पहले मेटाडोर की बिक्री से जितनी रकम हो सके वसूल कर ले। मूल-देनदार या गारंटर के खिलाफ आगे बढ़ने का बैंक का अधिकार ट्रायल कोर्ट के निर्देशों द्वारा प्रतिबंधित था। यह दर्ज करने के अलावा कि वाहन का पता नहीं लगाया जा सका, उच्च न्यायालय के आक्षेपित फैसले में कुछ भी दर्ज नहीं किया गया है कि बिक्री के लिए मेटाडोर की वसूली के लिए बैंक द्वारा अपने डिक्रीटल बकाया की वसूली के लिए वास्तव में क्या कदम उठाए गए थे। हमारे विचार में, सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अनुरूप पारित निष्पादन न्यायालय के आदेश को परेशान करने के बजाय, उच्च न्यायालय को प्रतिवादी बैंक और निष्पादन न्यायालय को निष्पादन न्यायालय के निष्कर्ष के अनुसार कि उक्त सावधि जमा अपीलकर्ता के सेवानिवृत्ति लाभों का प्रतिनिधित्व करती है, मैटाडोर की वसूली या मूल ऋणी की किसी अन्य संपत्ति के खिलाफ गंभीरता से कार्रवाई करने का निर्देश देना चाहिए था ।

27. इसलिए, हम अपील की अनुमति देते हैं, उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को रद्द करते हैं और निष्पादन न्यायालय के आदेश को बहाल करते हैं। प्रतिवादी बैंक फैसले और ट्रायल कोर्ट के डिक्री में बताए गए तरीके से

अपने बकाए की वसूली के लिए मेटाडोर की वसूली के लिए उचित कदम उठा सकता है। नतीजतन, दिनांक 06.02.1999 और 27.07. 2001 के आवेदन का निपटारा करते हुए निष्पादन न्यायालय के निर्देशों के अनुसार अपीलकर्ता की सावधि जमा रसीदें उसके आदेश दिनांक 01.11.02 द्वारा जारी की जाएं।

एस.के.एस.   अपील की अनुमति दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी दिलीप कुमार मीणा (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।